शोध मंथन, Impact Factor 5.463 (SJIF), UGC No. 40908 ISSN: (P): 0976-5255, (e) : 2454-339X,
Vol. X, No. 1, pp (95-106), Jan-March 2019

धर्म एवं संगीत का पारस्परिक संबंध एवं धर्म के प्रचार में विभिन्न गायन शैलियों का योगदान

अन्शू शर्मा,
शोधार्थी, संगीत विभाग, आई0एन0 पी0जी0 कॉलिज, मेरठ
Email :anshusharma.net.p.hd@gmail.com

सारांश

प्रकृति में अपूर्व संगीत व्याप्त है। पक्षियों के कलरव से एक अपूर्व नाद की सृष्टि होती है। प्रकृति की घटनाओं में एक छंदबद्धता है। यह मनुष्य को संगीत के प्रति उन्मुख करती है।

संगीत और धर्म का साहचर्य मानव जीवन और संस्कृति में आदिकाल से चला आ रहा है। प्रारंभ से ही मानव जीवन के साथ –साथ संगीत और धर्म किसी न किसी रूप में बराबर साथ रहा है। प्रारंभिक धर्मों में भी, जबकि धार्मिक भावना का विकास इतना अधिक नहीं हुआ था और न ही ईश्वर की धारणा का विकास ही अधिक हो पाया था, उस समय भी जबकि धर्म मात्र क्रिया–कलाप और पर्व–त्यौहार या धार्मिक कृत्यों के साथ संगीत का समन्वय पाया जाता है। धर्म प्रचार का साधन ही संगीत है। संगीत उपासना और धर्म को न केवल सजाता और सुंदर बनाता है। बल्कि उसे दीर्घ जीवी भी बनाता है। यह उसे स्थायित्व भी प्रदान करता है। धर्म एक गहरी अनुभूति है और संगीत उस अनुभूति की सरस एवं सुंदर अभिव्यक्ति है। भारतीय सभ्यता, भारतीय चिंतन, भारतीय कला, भारतीय विज्ञान सबकी यही एक दशा रही है। आध्यात्मिकता में सबके प्राणों का निवास है। सब अन्ततोगत्वा इसी में निमग्न होते हैं।

प्रस्तावना

भारतीय संगीत के मूल भावमें परमात्मा के सत् चित् आनंद–प्राप्ति का उददे्श्य समाहित है। संगीतकार जब अपनी संगीत–साधना में निमग्न होता है। तो वह परमात्मा के इस आनंदरूपी स्वरूप का स्पर्श करता है और इससे संगीत के विविध आयामों का सष्जन होता है।

ईश्वर को स्मरण रखने का सर्वोत्कृष्ट उपाय कदाचित् संगीत ही है। संगीत का मानव मस्तिष्क पर ऐसा प्रभुत्व है, जो क्षण–भर में ही उसके चित्त का एकाग्रता प्रदान कर देता है। इसलिये सन्त, गायक, त्यागराज की कृति, **''नादसुधा'' का दृष्टांत** इस प्रकार है–

''हर ध्वनि ओम से ही उत्पन्न हुई। वेदों, अगमों, शास्त्रों तथा पुराणों का यह सार तत्व (संगीत) आपके सभी दुखों को दूर कर आपको परमानंद प्रदान कर सकता है।''

हिन्दुस्तान में अध्यात्म और संगीत का आपस में अटूट संबंध रहा है। भारतीय संगीत के परिपेक्ष में अगर बात की जाये तो हमारे ऋषि–मुनियों ने वैदिक काल से ही इसे मोक्ष तक

पहुँचाने का साधन बताया और देसी एवं मार्गी संगीत में विभाजित कर इसके उद्देश्यों को निश्चित किया। मार्गी संगीत का उद्देश्य जहाँ मोक्ष प्राप्ति था वहीं देसी संगीत का जन साधारण के मनोरंजन का साधन माना गया ।

भारतीय संगीत भारत की संपूर्ण परम्परा सभ्यता एवं संस्कृति का दर्पण है। विभिन्न संगीत कलायें प्रारंभ से ही धर्म–साधना एवं आंतरिक अभिव्यक्तियों को साकार करने का माध्यम रही है।

भारतीय संस्कृति के साहित्य का अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि उसका दषष्टिकोण सदैव आध्यात्मिक अवस्थाओं तथा सिद्धांतो को मान्यता देना रहा है। आध्यात्मिक सत्ता में विश्वास रखना ही धर्म का प्रथम सोपान है। भारत एक धर्म प्रधान देश है। जिसकी मिट्टी में कण–कण में राम, कृष्ण, बुद्ध और महावीर की आत्मा समाई हुई है, जो हमें धर्म से जोड़े हुये हैं। धर्म एक ऐसा शब्द है जो मानव का एक या अधिक दिव्य शक्तियों के साथ संबंध स्थापित करता है। कुछ भाषाविद् धर्म, जिसे अंग्रेजी में (Religian) रिलिजन कहा जाता है, को अंग्रेजी के **"Relegare to gather to gether"**से संबद्ध मानते हैं, कुछ अन्य इसे **"Relegare to bind back to fasten"** से जुड़ा मानते है। जिसका अर्थ मानव का ईश्वर से संबंध हो सकता है। यदि इस व्युत्पत्ति के आधार पर रिलिजन को समझा जाये तो वह एक ऐसी वस्तु है, जो आराध्य तथा आराधक, उपास्य तथा उपासक, व्यक्ति तथा समाज को आपस में बाँधाती है। अपने मूल रूप में धर्म का यही सृजनात्मक स्वरूप रहा है–(1)

धर्म शब्द 'धृ' धातु से बना है जिसका अर्थ होता है–धारण करना या बनाये रखना। इसका तात्पर्य यह है कि जो तत्व संपूर्ण संसार के जीवन को धारण करता हो, जिसके बिना संसार में व्यक्ति की अवस्थिति संभव ना हो वही धर्म है। धर्म वह है जो मानव मन की चंचलता ओर मानसिक अशांति को शांत कर किसी विशेष संप्रदाय की अेर आकर्षित हो जाता है। भारतीय परम्परा में धर्म का लक्ष्य मनुष्य को सत्य मार्ग दिखाकर उसकी सांसारिक एवं आध्यात्मिक उन्नति करना है। सभी धर्मों का उद्देश्य मनुष्य का कल्याण करना रहा है।

भारतीय मनीषियों ने धर्म की परिभाषा करते हुये कहा है–

''धारयते जनैरीति धर्म''।

अर्थात् मनुष्य द्वारा जिसे धारण के रूप में धारण कर तदनुरूप अपने आचरण को बनाये वही धर्म कहलाता है। धर्म का अर्थ निःश्रेयस भी है। जिसका अर्थ लौकिक तथा पारलौकिक अभ्युदय। वास्तव में धर्म व्यक्ति की ऐसी उच्चतर अदृश्य शक्ति पर विश्वास है। जो उसके भविष्य पर नियंत्रण करती है और जो अपनी आज्ञाकारिता, शील, सम्मान, तथा आराधना का विषय है'' (2)

धर्म एक लौकिक धारणा है। धर्म अनुभव का विषय है। यह एक दिव्य शक्ति है जो कल्पना मात्र न होकर वरन् तत्व है। यह ईश्वर और मानव के सच्चे और प्रबल संबंध को स्थापित करता है। धर्म मानव मन को ईश्वर की और अग्रसित करती है जो अदृश्य शक्तियों पर आधारित

है। मानव मन को ईश्वर की आस्था की ओर ले जाने का कार्य ही धर्म है। लोक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विभिन्न धर्मों को मानने वाले अपने–अपने परम्परागत रीति–रिवाजों के अनुसार अपने–अपने धर्मों में पूरी तरह आस्था में निहित देखे जा सकते है।

सभी धर्मों का उद्देश्य ही मानव का कल्याण करना है। जीवन का ऐसा कोई भी पहलू नहीं है, जहां धर्म की धारणा न हो, वेदों में तो यहां तक कहा गया है कि धर्म के सहारे पर ही प्रत्येक पदार्थ की सत्ता स्थिर है।

''धर्मो विश्वस्य जात प्रतिष्ठा''

धर्म की परिभाषायें

1. स्वामी विवेकानन्द मनुष्य की आत्मा में दैवीय शक्ति के दर्शन कराते हुये कहते हैं–
   " Religion is the manifistation of the divinity already in man. (3)
2. डॉ0 रामचन्द्र महेन्द्र ने धर्म की व्यापकता को दृष्टिगत रखते हुये कहा है कि –

''धर्म हमारे दैनिक जीवन का साथी और पथ प्रदर्शक है।''

सामान्य धर्म का को रूप विशेष नहीं होता। मनुष्य अपने रूचि, संस्कार आदि के अनुसार धर्म को अपनी पसंद का रूप देता आया है। बुद्धिप्रधान तर्कशील व्यक्ति उसे दार्शनिक रूप देता है वह जीवन में प्रतिदिन और प्रतिपल व्यापार की जीवन पद्धति है। भारतीय धर्म का स्वरूप इतना व्यापक है कि अंग्रेजी भाषा का रिलिजन शब्द धर्म का पूर्ण अर्थ व्यक्त करने में असमर्थ हैं। मुसलमानों का मजहब भी धर्म का पर्याय नहीं कहा जा सकता है। धर्म सामाजिक और मानवीय तत्व है। जबकि रिलिजन और महजब आलौकिक, ईश्वरीय और सीमित भाव बोधक है। धर्म का स्वरूप समय के अनुसार बदलता रहता है। असभ्य जंगली समाज का धर्म जीवन तथा उसकी सुरक्षा से संबंधित था। असभ्य समाज के जीवन और उसके प्रयास की चिंता को ही उन्होंने अपने धर्म का आधार, बना लिया। प्राचीन महर्षियों एवं विचारक विद्वानों ने धर्म को अनेक प्रकार से परिभाषित किया है तथा धर्म की अनेक व्याख्यायें की हैं। वस्तुतः धर्म का स्वरूप अत्यंत व्यापक एवं विशाल है। धर्म के मुख्य दो रूप स्पष्ट होते हैं–

1. सामान्य धर्म
2. विशिष्ट धर्म (4)

धर्म मनुष्य की आध्यात्मिक अनुभूति है। साधारणतः मनुष्य की प्रवृत्ति बहिर्मुखी होती हैं। यह पंच ज्ञानेन्द्रियों से संचालित होती है। ये ज्ञानेन्द्रियाँ बहिर्मुखी होती है इसलिये इनसे व्यक्ति को बाह्य जगत का अनुभव प्राप्त होता है। इनके द्वारा रूप, रस, स्पर्श, शब्द गंध इत्यादि स्थूल और परिर्वतनशील तथ्यों का ज्ञान होता रहता है।

धर्म सत्य की उपलब्धि है। सत्य वह सारभूत तत्व है जो नाम और रूप के पीछे कार्य करता है। इसलिये धर्म सारभूत सत्ता और ब्रहम की प्राप्ति है। यह ब्रहम की आत्मा है इसलिये धर्म आत्मानुसंधान और आत्मोउपलब्धि है। यह आत्मा की अनुभूति है। इसे ही धार्मिक अनुभूति कहा जाता है।

सामान्य धर्म से तात्पर्य उस धर्म से है जो देश काल पात्र के अनुरूप परिवर्तित न होता हो । विशिष्ट धर्म का तात्पर्य उस धर्म से है जो देश काल पात्र के अनुरूप परिवर्तित हो। [5]

धर्म आस्था, विश्वास, श्रद्धा तथा भक्ति के उपकरणों से हृदय को स्नेह की उर्मियों से आच्छादित कर डालता है। धर्म एक स्वतंत्रत अनुभूति है जिसका संबंध मनुष्य के आंतरिक आध्यात्मिक जीवन से है।

धर्म के लक्षण–धर्मशास्त्री मनु ने धर्म के दस लक्षण इस प्रकार बताये हैं–

1–धैर्य

2–क्षमा

3– मान का निग्रह

4– चोरी का त्याग

5–पवित्रता

6–इन्द्रियों का निग्रह

7–बुद्धि

8–विद्या

9–सत्य

10–क्रोध का अभाव [6]

धर्म और संगीत का संबंध

संगीत और धर्म का साहचर्य मानव जीवन के साथ–साथ संगीत और धर्म किसी न किसी रूप में बराबर साथ रहा है। प्रारंभिक धर्मों में भी जबकि धार्मिक भावना का विकास इतना अधिक नहीं हुआ था और न ही ईश्वर की धारणा का विकास ही अधिक हो पाया था, धार्मिक कृत्यों के साथ संगीत का समन्वय पाया जाता है।

संगीत और धर्म दोनों ही सत्ता (Reality) से संबंधित हैं और उसके प्रति दो विभिन्न प्रक्रियायें हैं। दोनों का संबंध ऐसी सत्ता से है जो सत्यं, शिवं और सुंदरम् है और इसी की अभिव्यक्ति संगीत है। [7]

धर्म और संगीत के रेशे परस्पर गुँथे हुये परम्परा, संस्कृति और सनातनता से ओत–प्रोत एक मजबूत रस्सी का निर्माण करते हैं। दोनों का ही चरम लक्ष्य परमात्म तत्व की प्राप्ति है और आत्म–साक्षात्कार के इस मार्ग में जहाँ धर्म और संगीत दोनों ही एक–दूसरे के सहायक घटक हैं।

भारतीय संगीत प्राचीनकाल से ही धर्म के संरक्षण मे उद्भूत हुआ तथा पला बढ़ा। धर्म में चित्त की एकाग्रता के लिये संगीत का आश्रय लिया जाता है। आत्मिक उत्थान के लिये संगीत एक स्वाभाविक सोपान का कार्य करता है। संगीत जहां मानव की आत्मा का विकास करता है वहीं इससे उठने वाली तरंगें नाद द्वारा मानव मन शरीर तथा आत्मा सभी को एकसूत्र में पिरोने का कार्य भी करता है।[8]

धर्म के प्रचार में विभिन्न गायन शैलियों का योगदान

भारतीय संगीत का विकास एक लंबे इतिहास क्रम को प्रस्तुत करता है। वह अनेक संगीत शैलियों, युग प्रवृत्तियों तथा रचयिताओं के एक क्रमिक एवं व्यापक फलक से जुड़ा हुआ है। भारतीय संगीत आज जिस रूप में उपलब्ध है वह अनेक युगों की गायनशैली पर आधारित है। विभिन्नकाल की शैलियाँ हमारे भारतीय संगीत को विविध आयामी विकास प्रदान करती रही हैं। वैदिक काल से लेकर मध्यकाल एवं आधुनिककाल तक भारतीय संगीत न जाने कितनी गायनशैलियों, विविध प्रवृत्तियों एवं संस्कृतियों से अनुप्रेरित होता रहा है। विभिन्न गायनशैलियाँ इस प्रकार हैं–

1– ध्रुपद गायनशैली

ध्रुवपद सर्वाधिक प्राचीन तथा संगीत की उच्च श्रेणी का प्रबंध है। इसका प्राचीन रूप 'ध्रुवा' गान आदि रहा जो प्रमुख रूप से मंदिरों में ही गाया जाता था। आधुनिक (ध्रुवपद) रूप धारण करने पर जहाँ एक और वह मुगलों के प्रभाव से राजाओं की प्रशंसा में गाया जाता था वहीं दूसरी और ईश्वर स्तुति, रूप में मंदिरों में था। सूर, नंददास छीतस्वामी आदि अष्टछाप कवियों तथा हरिदास द्वारा भक्तिमय ध्रुवपद ही गाये जाते थे।[9]

ध्रुपद शुद्ध राग–रागिनी में रचे जाते हैं। इस गायिकी में चारताल और सूलताल में भी इसकी रचना की गयी है। ध्रुपद गायन का प्रारंभ नोम–तोम के आलाप से किया जाता है। इसके निबद्ध होते हुये भी गायक अपनी इच्छानुसार इसको लयबद्ध कर लेता है। इस गायिकी में तानों का प्रयोग बहुत कम होता है। इस गायकी को गाते समय पखावज वाद्य का प्रयोग किया जाता है, ध्रुपद में केवल वीर, शांत व भक्ति रस का ही उपयोग किया जा सकता है। ध्रुपद गायकों की चार बानियाँ हैं, जिसको हम ध्रुपद गायनशैली में चार घराने कह सकते हैं–

1–खंडार बानी

2–नौहर बानी

3–डागुर बानी

4–गोबरहार बानी[10]

ध्रुपद आरंभ करने से पहले ''ओम अंनत नारायण हरि'' अथवा ''तु ही अनंत हरि'' । इस प्रकार ईश्वर के नामों का उच्चारकरण करके राग विस्तार किया जाता है। इससे हिंदू समाज धर्म .के प्रतिनिष्ठा रखने में सबल होता प्रतीत होता है।

धर्म के प्रचार के लिये राग भैरव की ध्रुपद की स्वरलिपि इस प्रकार है–

राग भैरव–चौताल–

स्थाई –शीश जटा गंग सोहे बाल चन्द्र सोहे भाल, ।
गले सोहे ब्याल माल कर त्रिशूल धारी।।

अंतरा–भष्म अंग संग सोहे गौरी गणपति गणेश।
कटि लपेटे ब्याघ्र छाल डमरू की धारी।।

स्थाई–

ध–	नि सां	सां –	रें –	सां ध	– प
सी ऽ	स ज	टा ऽ	गं ऽ	ग सो	ऽ हे
x	0	2	0	3	4
प ग	म ध	– प	प ग	म रे	– सा
बा ऽ	ल चं	ऽ द्र	सो ऽ	हे भा	ऽ ल
x	0	2	0	3	4
धध	सा रे	ग म	प ग	म ध	–प
ग ले	ऽ सो	ऽ हे	ब्या ऽ	ल मा	ऽ ल
x	0	2	0	3	4
ध नि	सां ध	– प	म ग	म रे	– सा
क र	त्रि शू	ऽ ल	धा ऽ	ऽ री	ऽ ऽ
x	0	2	0	3	4

अंतरा–

म–	प ध	– नि	सां –	सां रें	– सां
भ ऽ	स्म अं	ऽ ग	सं ऽ	ग सो	ऽ हे
x	0	2	0	3	4
ध–	नि सां	सां सां	रें गं	मं रें	– सां
गौ ऽ	री ऽ	ग ण	प ति	ग णे	ऽ श
x	0	2	0	3	4
प ग	म ध	– प	सां –	सां रें	– सां
क टि	ल पे	ऽ टे	ब्या ऽ	घ्र छा	ऽ ल
x	0	2	0	3	4
ग म	धध	– प	म ग	म रे	– सा
ऽ म	रू क	ऽ र	धा ऽ	ऽ री	ऽ ऽ
x	0	2	0	3	4[11]

2– धमार गायन शैली

ध्रुपद गायन के समकालीन धमार गायन प्रचलित था। धमार गायनशैली में अधिकतर राधाकृष्ण एवं गोपियों की लीलाओं का वर्णन मिलता है।[12]

धमार गीत ब्रजभाषा में अधिक होते हैं कुछ गीत साधारण हिंदी में भी होते हैं। उर्दू अथवा अन्य भाषाओं में धमार दिखायी नहीं देते। इनकी पद्य रचना संक्षिप्त होती है। गीत में स्थाई, अंतरा दो ही भाग होते हैं। इनमें होली उत्सव का वर्णन होता है। श्रीकृष्ण राधिका तथा

गोपियों द्वारा होली खेलने का वर्णन कई गीतों में मिलता है। स्वाभाविक रूप से ही इस गीत प्रकार में होली खेलना, पिचकारी, रंग, गुलाल, अबीर आदि शब्दों की अधिकता रहती है।(13) वास्तव में हिन्दू धर्म के प्रचार में धमार गायन का विशेष महत्व है क्योंकि इस शैली में पूर्णतः भगवान कृष्ण के वर्णन का स्वरूप है तथा होली खेलने का वर्णन है। धमार गायन शैली का नाम इसमें प्रयुक्त होने वाली ताल धमार की संज्ञा पर रखा गया है।

धर्म के प्रचार के लिए धमार गायनशैली का राग गोरखकल्याण का धमार इस प्रकार है–

राग गोरख कल्याण – धमार

स्थायी– आबिर गुलाल छायो है री चहुँ दिसि अम्बर में।

अंतरा– कुम–कुम की कीच मची है, ब्रज की डगर–डगर में।।

स्थायी–

म रे म ध नि	ध म	रे म रे	सा नि ध सा
अ बि र गु ला	ऽ ल	छा ऽ यो ऽ हैं ऽ री	
X	2	0	3
म ध नि ध सां	रें सां	नि ध म	रे म रे सा
च हुँ दि स अ	ऽ ऽ	म्ब र ऽ	ऽ ऽ में ऽ
X	2	0	3

अंतरा–

म ध नि ध सां	—	सां रें रें	सां नि–ध
कु म कु म की	ऽ ऽ	की ऽ च	म ची ऽ है
X	2	0	3
म ध रें सां नि	ध म	रे म नि	ध म रे सा
ब्र ज की ऽ ड	ग र	ऽ ऽ ग र में ऽ ऽ	
X	2	0	3(14)

3–ख्याल गायन शैली–हमारी सांगीतिक परम्परा की निरंतरता के ही परिणाम स्वरूप विभिन्न गीत प्रकार प्रचार में आये और आपस में संबंधित भी रहे रव्याल गायन शैली के संदर्भ में भी यही निरंतरता और पूर्व गीतशैलियों से जुड़ाव की कड़ी मिलती है।(15)

गायन शैली में देवी–देवताओं की स्तुतियों तथा कथाओं के अतिरिक्त श्रृंगारिक भावनाओं का पुट भी देखने को मिलने लगा। बिलम्बित अथवा द्रुत रव्यालों के साहित्य में संयोग तथा वियोग की रचनाओं की प्रधानता दिखायी तथा ईश्वर संबंधी वर्णन भी मिलता है।

राग के नियमों में ही इच्छानुसार अलाप–तान द्वारा विस्तार करते हुये जो गीत गाया जाता है, उसे 'ख्याल' या खयाल कहते हैं। 'ख्याल' का अर्थ है विचार अथवा कल्पना। इसी अर्थ के अनुसार इस गीत में गायक अपनी कल्पना से विभिन्न प्रकार के स्वर–समुदायों द्वारा गीत के

शब्दों को अनेक प्रकार से गाता है। ख्याल गायन में स्वरों की सुंदरता मुख्य है लय की कम। इसमें श्रृंगार, करूण अथवा भक्ति एवं शांत रस ही मुख्य रूप सें विद्यमान हैं।

ख्याल के दो प्रकार होते हैं–

1. विलम्बित ख्याल
2. द्रुत ख्याल[16]

धर्म के प्रचार के लिये ख्याल गायनशैली का राग रागेश्वरी का विलम्बित ख्याल इस प्रकार है–

राग– रागेश्वरी का विलम्बित ख्याल (एकताल)

स्थाई–जनम लियो है कन्हाई आज नन्द घर बजत बधाई।

अंतरा– गगन मगन गावे सुर मुनि 'रामरंग' धन यशोदा नन्दराई।।

स्थाई–

गम धग म –	गम रे	सा –सा नि ध	नि सा	
जन मलियो ऽ	ऽऽ है	ऽ ऽक	न्हा ऽ	ई ऽ
X 0	2	0	3	4
गम धनि सां –सां	नि ध	म –ध	गम रेसा निध निसा	
आऽ जन न्द ऽघ	र ऽ	ऽ ऽब	जड तब	धाऽ ईऽ
X 0	2	0	3	4

अंतरा–

गमधनि सां सां	धनि सांगं	रें सांसां	नि ध	ग म
गग नमग न गाऽ	वेऽ ऽ ऽसु	र ऽ	मु नि	
X 0	2	0	3	4
गम धनि सां सां	धनि ध	म मध	ग म	
रे सा,सा				
राम रंग ध न	यशु दा	ऽ नन्द	रा ऽ	ई ऽ,ज
X 0	2	0	3	4

गम धम
नऽ मलि
X[17]

धर्म के प्रचार के लिये रव्याल गायनशैली का मध्यलय इस प्रकार है–

राग दुर्गा, द्रुत रव्याल

स्थायी– देवि दुर्गे दयानी दया करो
जग जननि जग की वेगि बिथा हरो।

अंतरा– वरदानी भवानी दुख हरणि,

दानि महानि 'रामरंग' आयो
शरण चरणन तेरो मातु मया करो।

स्थायी–

रे प प ध	म प धपध –म प	म रे सा सा	
देऽ वि दुऽ	र्गे ऽ द	या ऽनि द	या ऽ क रो
x	2	0	3
रे ध़ सा रे	म प ध सां	ध सां रेंसांधम	प म रे सा
ज ग ज न	नि ज न की	बे ऽ ऽऽ गिबि	था ऽ ह रो
x	2	0	3

अंतरा–

ध म प ध	सां सां–सां	सां–सांसां	सां रें सां सां
व र दा ऽ	ऽ नि ऽ भ	वा ऽ नि दु	ख ह र नि
x	2	0	3
रें मं रें सां	ध सां ध म	रे म प ध	म रे सा सा
दा ऽ नि म	हा ऽ नि रा	ऽ म रं ग	आ ऽ यो शा
x	2	0	3
म रे प म	ध प सां ध	ध सां रें सां धप	प म रे सा
र न च रन न ते रो	माऽ ऽऽ तुम		या ऽ क रो
x	2	0	3

4– ठुमरी–

सुगम शास्त्रीय संगीत का सबसे प्रमुख गीत–प्रकार ठुमरी है। गीत के बोलों को बार–बार अलग–अलग ढंग से आकर्षक स्वरावली में गूँथकर भावानुकूल रूप में पेश करना ठुमरी की विशेषता है।[18]

प्रायः ठुमरी दीपचंदी या अद्धा में तथा कभी–कभी दादरा और कहरवा आदि तालों में भी गायी जाती है। अपेक्षाकृत चंचल गति में गायी जाने वाली गायिकी को ठुमरी कहते हैं। यह द्रुत या मध्य लय में गाये जाने वाले रव्याल के बहुत निकट है तथा गाने का ढंग भी इससे मिलता जुलता है। कभी–कभी उन्हीं रचनाओं को कोई गायन रव्याल के रूप में तथा कोई बंदिश की ठुमरी रूप में पेश करते हैं।

शास्त्रीय संगीत में नियमों की शिथिलता ने जिस ठुमरी गायनशैली को जन्म दिया उसने कृष्ण भक्ति के प्रचार –प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया। एक ही पंक्ति की पुनरावृत्ति से समाज धार्मिक वातावरण में बंध गया ।

धर्म के प्रचार के लिए ठुमरी गायनशैली का राग खमाज की स्वरलिपि इस प्रकार है–

राग–खमाज

ठुमरी

स्थायी–

पनि ध प	म ग रे म	पप– प ध	मग प म ग
रा ऽ धे ब	नो ऽ ह म	श्या ऽ म बि	हाऽ ऽ री ऽ
0	3	X	2
ग म धनि	ध – ध म	ध – ध नि	धप ध प प
मे ऽ रो ऽ	ना ऽ म ध	रो ऽ न न्द	नऽ ऽ न्द न
0	3	X	2
ग म प ध	प ध नि सां	ध सां नि ध	म ग ग म
तु म वष् ष	भा ऽ नु दु	ला ऽ री ऽ	ऽ ऽ तु म
0	3	X	2

अंतरा

ग म प ध	नि –सां –	नि नि सां –	नि रें सां सां
तु म प हि	रो ऽ चू ऽ	न र टी ऽ	का ऽ म णि
0	3	X	2
प– नि –	नि – सां सां	ध नि सां नि	प ध प –
म ऽ पी ऽ	तां ऽ व र	ध ऽ ऽ ऽरी ऽ ऽ ऽ	
0	3	X	2
ग म ध ध	नि ध ध प	ग म प ध	म ग प म
में ऽ मु रली ऽ धु न		म धु र ब	जा ऽ ऊँ ऽ
0	3	X	2
ग म प ध	प ध नि सां	ध सां नि प	म ग ग म
तु म ना ऽ	चो ऽ गि रि	धा री ऽ ऽ	री ऽ तु म
0	3	X	2
प ध नि ध	म ग रे म		
रा ऽ धे ब	नो ऽ ह म		
0	3		

5– कजरी–

कजरी ऐसी लोकप्रिय गीतशैली है जो सड़कों चौराहों बाग– बगीचों, मेलों, सामान्य गोष्ठियों, से लेकर महफिल तक में गायी गयी है। प्रचलित धुनों को लेकर इसे अंलकार, मुर्की

के साथ गायी जाती है। मिर्जापुर में एक ढुनमुनिया कजरी की भी प्रथा है, जिसमें गुजरात के गरबा नष्त्य की तरह स्त्री–पुरूष मिलकर ताली बजाते हुये गोलाकार गाते हैं।

इस कजरी–शैली में झूम–झूमकर गने वालों के साथ सुनने वाले भी झूमने लगते हैं। कजरी गीतों की धुनें विशेष प्रकार की होती है।

6– चैती–

चैती अत्यन्त मधुर एवं कर्ण– प्रिय गायनशैली हैं जहाँ तक लोकसंगीत की परिधि में चैती का पर्यवेक्षण है, वह अपने–आप में ठोस एवं संपूर्ण है। अधिकतर चैती गीतों को सुनने के बाद इस निष्कर्ष पर आना पड़ता है कि चैती विशेष रूप से सात एवं आठ मात्रा में गायी जाती है।

चैत का महीना बहुत से धार्मिक पर्वों एवं धार्मिक भावनाओं से जुड़ा है। चैत्रा शुक्ल नवमी को रामनवमी त्यौहार का आयोजन बड़े धूम–धाम से होता है। इस दिन मर्यादा पुरूषोंत्तम राम ने अयोध्या के राजा दशरथ के यहाँ अवतार लिया था रामनवमी के दिन लोग उपवास या फलाहार करते हैं। इसके पूर्व चैत्रा शुक्ल प्रतिपदा से नवमी तक मंदिर में रामायण का निर्वाद पाठ होता है।

7– लोकगीत–

पहाड़ से फूट कर स्वच्छंद बहने वाले झरने की उपमा लोकगीत को दी जाती है। अलंकार, रस, छंद, राग, और ताल आदि भावनायें सरल किंतु आकर्षक धुन और लय में बंधे गीत के रूप में उसके कंठ से अनायास प्रस्फुटित होती है। पाँव भी थिरक उठते हैं। इसलिये लोकगीत और लोकनृत्य को पूरी तरह अलग–2 कर पाना संभव नहीं है। लोक धुनें नैसर्गिक हैं। उनमें अंतर्निहित रागों के विकसित और परिष्कृत रूप शास्त्रीय राग है।

भक्ति, श्रृगांर, करूण तथा वीर आदि विविध भावनाओं को व्यक्त करने वाले लोकगीत प्रचार में हैं। लोकजीवन की सच्ची, झाँकी इनमें मिलती हैं। ग्रामवासियों की आशा–आकांक्षा, सुख–दुख, दैनिक कार्यकलाप, पर्व–त्यौहार, धार्मिक अनुष्ठान, विवाह, पुत्रजन्म, फसल की बुवाई, कताई, सूर्योदय, सूर्यास्त, वर्षा, बसंत आदि त्रच्तुओं का मनोहर चित्रण लोकगीतों में रहता है। भारत के विभिन्न प्रदेशों के अपने–अपने परम्परागत लोकगीत है।[19]

निष्कर्ष

प्रकृति के कण–कण में संगीत व्याप्त है। संगीत अपने आप में एक धर्म की ही तरह है। भारत में हर प्रकार के धर्म देखे जा सकते हैं– यहूदी, इसाई, इस्लाम, हिंदू तथा इसके विभिन्न अंग जैसे – जैन, बुद्ध, सिख आदि।

सभी धर्मों में संगीत स्वछन्द रूप से विद्यमान है। इसलिये ही संगीत का धर्म से घनिष्ठ संबंध है और धर्म के प्रचार में गायन शैलियों का एक अद्वितिय योगदान है। इसी वजह से धर्म और संगीत की निर्मल धारायें अनेकानेक कठिनाईयों, परिवर्तनों, उतार–चढ़ाव के बावजूद अबोध गति से प्रवाहमान हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. *धर्मदर्शन*– डॉ0 रामनारायण व्यास, पृ0–**17**
2. *हरिवंश पुराण में धर्म* – डॉ0 ओम प्रकाश नीखरा, पृ0–**97, 91**
3. *भारतीय संगीत का आध्यात्मिक स्वरूप*– डॉ0 राजीव वर्मा, डॉ0 नीलम पारिक–पृ0–**93**
4. *भारत की धार्मिक परम्परा*– नत्थूलाल गुप्त, पृ0–**2,3**
5. *संगीत दर्शन* – विजयलक्ष्मी जैन, पृ0–**116**
6. *हरिवंश पुराण में धर्म* – डॉ0 ओम प्रकाश नीखरा,
7. *संगीत दर्शन*– विजयलक्ष्मी जैन, पृ0–**118**
8. *भारतीय संगीत का इतिहास*, डॉ0 सुनीता शर्मा, पृ0–**8**
9. *मनुस्मृति* – श्री पं0 हरगोविन्द शास्त्री, पृ0– **109**
10. **उपकार प्रवक्ता भर्ती परीक्षा**– डॉ0 निशा रावत, पृ0–**44** P
11. *अभिनव गीतांजलि* भाग– चार, पं0 रामाश्रय झा ''रामरंग, पृ0–**10, 11**
    प्रकाशक संगीत सदन प्रकाशन, 134, साउथ मलाका, इलाहाबाद
12. *भारतीय संगीत के मूल आधार*, डॉ0 सुधा श्रीवास्तव, पृ0–**119**
13. *चित्रा हमारा संगीत,* सौ0 सुमन पाटणकर एल0 जी पाटणकर, चन्द्रकान्त पाटणकर पृ0–**93**, चित्रा प्रकाशन (इण्डिया) प्रा0 लि0 दिल्ली, मेरठ
14. *अभिनव गीतांजलि* भाग– तीन, पं0 रामाश्रय झा ''रामरंग'', पृ0– **31, 32** प्रकाशन संगीत सदन, 134 साउथ मलाका, इलाहाबाद।
15. वही, पृ0– **159**
16. *चित्रा हमारा संगीत,* सौ0 सुमन पाटणकर, एल0 जी पाटणकर, चन्द्रकांत पाटणकर, पृ0–**83, 84** प्रकाशन – चित्रा प्रकाशन (इण्डिया) प्रा0 लि0 दिल्ली, मेरठ
17. *अभिनव गीतांजलि* भाग– दो, पं0 रामाश्रय झा *'रामरंग'* प्रकाशक संगीत सदन, 134, साउथ मलाका, इलाहाबाद
18. क्रमिक पुस्तक *मालिका* भाग–2, श्री विष्णु नारायण भातखंडे, पृ0– **446**
19. क्रमिक पुस्तक *मालिका* भाग–2, श्री विष्णु नारायण भातखंडे